जाके कभी न परी बिवाई...

हिन्दी ADDA

अनुराग शर्मा

जाके कभी न परी बिवाई...

रंग डालने का समय गुजर चुका था। पिचकारियाँ रखी जाने लगी थी। फिर भी होली के रंग हर तरफ बिखरे थे लाल हरे लोगों के बीच सुनहरी या सफेदी पुते चेहरे भी हर तरफ दिख रहे थे। बरेली में यह समय था मोर्चा लड़ने का। मोर्चे की परंपरा कितनी पुरानी है पता नहीं मगर मोर्चा लड़ने के लिए लगभग हर घर में पीढ़ियों पुराना पीतल का हैंडपंप मिल जाएगा। यह पंप एक बड़ी परंपरागत पिचकारी जैसे होते हैं। एक बड़ी फूँकनी के भीतर एक छोटी फूँकनी। एक सिरे पर तीखी धार फेंकने के लिए पतला सा मुँह और दुसरे छोर पर जुड़ा हुआ एक लंबा सा रबड़ का पाइप जिसका दूसरा सिरा पानी से भरे लोहे के बड़े कढ़ाह में डाल दिया जाता था। लोहे की वर्गाकार पत्तियों को जोड़कर बनाए हुए यह कढ़ाह किसने बनाए थे यह भी मुझे नहीं मालूम मगर इतना मालूम है कि ये पूरा साल किसी नुक्कड़, चौक या चौराहे पर उपेक्षित से पड़े रहते थे, सिवाय एक दिन के।

धुलेड़ी यानी बड़ी होली वाले दिन बारह बजते ही हर ओर दो-दो लोग अपने-अपने पंप लिए हुए मोर्चा लड़ते नजर आते थे। दोनों खिलाड़ी अपनी आँख बचाकर अपने प्रतिद्वंद्वी की आँख को निशाना बनाते थे। जो मैदान छोड़ देता उसकी हार होती थी और उसकी जगह लेने कोई और आ जाता था। हमारा पंप औरों से भिन्न था। ताँबे का बना और काफी छोटा। हलके पंप की धार दूसरे पंपों जैसी जानलेवा नहीं थी। मगर उसे चलाना भी औरों से आसान था। यह इसी पंप का कमाल था जो मैं मोर्चे में कभी भी नहीं हारा - सामने कोई भी महारथी हो।

वज्रांग के लिए यह सब नया था। वह दिल्ली से आया था। हम दोनों एक ही उम्र के थे। उसका दाखिला भी मेरे ही स्कूल में हुआ। वह खिलाड़ी भी था और पढ़ाकू भी। शिक्षकों का चहेता था लेकिन काफी गंभीर और अंतर्मुखी। जल्दी ही हम दोनों में दोस्ती भी हो गई। उसके पिता नहीं थे। माँ एक सरकारी बैंक में काम करती थीं और 8-10 महीने पहले ही उनका तबादला बरेली में बड़ा बाजार शाखा में हुआ था। बरेली में यह उसकी पहली होली थी। वह बहुत ही उत्साहित था, खासकर हम लोगों को मोर्चा लड़ते देखकर। उसके उत्साह को देखकर मैंने जल्दी-जल्दी उसे पंप का प्रयोग बताया। सामने एक दूसरा पंप माँगकर पानी से आँख बचाने और सामने वाली आँख पर अचूक निशाना लगाने की तकनीक भी सिखाई। कुछ ही देर में वह अपनी बाजी के लिए तैयार था।

मोर्चे खेल-खेलकर जब हम दोनों के ही हाथ थक गए तब हमने घर की राह ली। वज्रांग बहुत खुश था। पहली बार उसने होली का ऐसा आनंद उठाया था। अपनी प्रकृति के

उलट आज वह खूब बातें कर रहा था। उसने बताया कि उसके पिताजी के जाने के बाद से क्या होली, क्या दीवाली सब उत्सव बेमजा हो गए थे।

वज्रांग और उसके माता-पिता की छोटी सी दुनिया बहुत खूबसूरत थी। सब कुछ बढ़िया चल रहा था। पिता एक बैंक में काम करते थे जबकि माँ घर पर रहकर वज्रांग की देखभाल करती थी।

इतवार का दिन था। उस दिन वज्रांग को हल्का सा बुखार था। उसके न करते-करते भी पिताजी तिलक नगर चौक तक चले गए उसके लिए दवा लेने। दस मिनट की कहकर गए थे मगर दरवाजे की घंटी बजी चार घंटे के बाद। देखा तो दो पुलिसवाले खड़े थे। उन्होंने ही वह दुखद खबर दी।

ढोल-ताशे की आवाज ने याद दिलाया कि होली की वार्षिक राम बरात का जुलूस निकल रहा था। हम दोनों ने रुककर कुछ देर तक उस अनोखी रंग-बिरंगी शोभा-यात्रा का मजा लिया और फिर जल्दी-जल्दी घर की तरफ बढ़ने लगे। शाम को गुलाबराय के होली मिलाप के लिए रगड़-रगड़कर रंग जो साफ करना था। आज के दिन जल-व्यवस्था का भी कोई भरोसा नहीं था। देर होगी तो शायद नहाने लायक पानी भी मुश्किल हो।

कुल्हाड़ा पीर के चौराहे पर एक मजमा सा लगा हुआ था। भीड़ के बीच में से इतना ही दिखा जैसे लाल अबीर में लिपटी हुई कोई मानव मूर्ति निश्चल पड़ी हो। भीड़ से पूछा तो किसी ने कहा, "लोट रहे हैं भंग के रंग में, होली है भैय्ये!" भीड़ में से ही किसी और ने जयकारा लगाया, "होलिका मैया की..." "जय" सारी भीड़ ने समवेत स्वर में कहा और अपने-अपने रस्ते लग गए।

रंगीन मूर्ति अब अकेली थी। वज्रांग उत्सुकतावश उधर बढ़ा तो मैंने हाथ पकड़कर उसे रोका, नशेड़ियों का क्या भरोसा, गाली वगैरा जैसे मौखिक अपमान तो उनके लिए सामान्य बात है, कभी कभार वे हिंसक भी हो उठते हैं।

वज्रांग मेरा हाथ छुड़ाकर मूर्ति के पास पहुँचा, और उसे पकड़कर हलके से हिलाया। मैं भी उसके पीछे-पीछे गया। मूर्ति ने एक बार आँखें खोली और फिर बिना कुछ कहे शांति से बंद कर ली। वज्रांग ने दिखाया कि उसके सर के नीचे का लाल द्रव रंग नहीं रक्त था। तब तक मैंने मूर्ति के रंगों के पीछे छिपे चेहरे को पहचान लिया था। वह भग्गा दही वाला था। बजरिया के पीछे चौक में कहीं रहता था। वज्रांग ने पास से गुजरते हुए एक रिक्शे को हाथ देकर रोका और भग्गा के निढाल शरीर को रिक्शा पर

चढ़ाने लगा। उसका उद्देश्य समझकर मैंने भी सहायता की और उसे बीच में करके हम दोनों इधर-उधर बैठ गए। तभी मुझे उस तरफ का ही एक लड़का बरात से वापस आता दिखा तो मैंने उसे भग्गा के घरवालों को गंगवार नर्सिंग होम भेजने को कहा।

जब तक हम लोगों ने भग्गा को भर्ती कराया, उसके परिवार के लोग वहाँ पहुँच गए थे। कुछ ने उसे सँभाला और बाकी हमसे सवालात करने लगे। मैंने देखा कि अभी तक इतना साहस दिखाने वाला वज्रांग एकदम से बहुत विचलित सा लगा। मैंने भग्गा के घरवालों को सारी बात बताई और वज्रांग को साथ लेकर घर आ गया।

शाम को होली मिलन के लिए तैयार होकर जब मैं वज्रांग को लेने पहुँच तो भग्गा के बेटों को उसके घर से निकलते देखा। मुझे देखकर वे दोनों रुके और बताया कि भग्गा बिलकुल ठीक है। अगर हम दोनों उसे नहीं देखते तो शायद वह ज्यादा खून बहने से ही मर गया होता। मरने की बात सुनते ही एक सिहरन सी दौड़ गई।

वज्रांग अपने कमरे के एक कोने में जमीन बैठा था। मोड़े हुए घुटनों को दोनों हाथों से घेरे हुए। उसने सर उठाकर मुझे देखा। गीली आँखों के बावजूद मुस्कुराने की कोशिश की। मैं साथ ही बैठ गया।

"भग्गा ठीक है..." उसने कठिनाई से कहा।

"हाँ!" मैंने उसे बताया कि मैं उसके बेटों से मिल चुका हूँ।

"मैं जानता हूँ कि सर से साया हटने का मतलब क्या होता है..." उसने रुक-रुक कर किसी तरह कहा, "...एक महीने तक घर से नहीं निकल सका था मैं।"

"एक महीने बाद तिलकनगर जाकर उन दुकानदारों से बात करने की हिम्मत जुटा पाया था। घातक हृदयाघात हुआ था पापा को। और... उन दुकानदारों ने जो कहा उस पर आज भी यकीन नहीं आता है।"

"...हमें क्या पता? हम समझे कोई पीकर पड़ा होगा... होश आएगा तो उठकर घर चला जाएगा।"

"जिंदगी भर सबके काम आने वाले मेरे पापा ने कभी किसी नशे को हाथ नहीं लगाया था।"

https://www.hindiadda.com/jake-kabhi-na-pari-bivaee/